

मुख्य लेख

प्रकृति से तालमेल की नई राह: जलवायु संकट के बीच बदलती छत्तीसगढ़ की खेती

डॉ. भुजेंद्र कोठारी

सहायक प्राध्यापक (एग्रोनॉमी)

शहीद गुंडाधुर कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र,
जगदलपुर (बस्तर), छत्तीसगढ़

बदलते मौसम में
लचीली खेती
सुरक्षित भविष्य

जलवायु अनुकूल
और टिकाऊ
छत्तीसगढ़ की
खेती



बदलते मौसम
के अनुकूल खेती



जल संरक्षण
और कुशल
उपयोग



मृदा स्वास्थ्य
का संरक्षण



विविध और
लचीली फसल
प्रणाली



प्रकृति के साथ
संतुलित और
टिकाऊ कृषि



बदलता मौसम

बढ़ता तापमान और
अनियमित वर्षा



जल संरक्षण

सूक्ष्म सिंचाई से
बेहतर जल उपयोग



विविध फसल प्रणाली

जोखिम में कमी
और स्थिर आय



मृदा स्वास्थ्य

जैविक पदार्थ और
उर्वरता में वृद्धि



स्थानीय संसाधन प्रबंधन

खेत तालाब और
वर्षा जल संचयन



उत्पादन में
स्थिरता



आय में
वृद्धि



जल का
कुशल उपयोग



जलवायु जोखिम
में कमी



सशक्त और
आत्मनिर्भर किसान

प्रकृति के साथ
खेत की समृद्धि
किसान का सुरक्षित भविष्य

प्रकृति से तालमेल की नई राह: जलवायु संकट के बीच बदलती छत्तीसगढ़ की खेती

डॉ. भुजेंद्र कोठारी

सहायक प्राध्यापक (एग्रोनॉमी)

शहीद गुंडाधुर कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, जगदलपुर (बस्तर), छत्तीसगढ़

परिचय

वैश्विक तापमान (Global Warming) का जमीनी असर

औद्योगिक क्रांति के बाद से वैश्विक स्तर पर पृथ्वी का औसत तापमान लगभग 1.1°C से 1.2°C तक बढ़ चुका है। पर्यावरणविदों के लिए यह भले ही एक आंकड़ा हो, लेकिन भारत के ग्रामीण अंचलों में यह एक कड़वी हकीकत है। जलवायु परिवर्तन अब केवल वैज्ञानिक सम्मेलनों का हिस्सा नहीं है, बल्कि इसका सीधा संबंध खेत की मिट्टी के सूखने, फसलों के झुलसने और ग्रामीण परिवारों के चूल्हे से है। जब एक सीजन की फसल खराब होती है, तो पूरी ग्रामीण अर्थव्यवस्था (Rural Economy) ताश के पत्तों की तरह ढह जाती है।

भारत का परिदृश्य

भारत की 45 से 50 प्रतिशत आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपनी आजीविका के लिए कृषि और उससे जुड़े क्षेत्रों (जैसे पशुपालन, डेयरी, मत्स्य पालन) पर निर्भर है। देश की सकल घरेलू उत्पाद (GDP) में कृषि का योगदान लगभग 15-18% है। इसलिए, जब मौसम का मिजाज बिगड़ता है, तो यह केवल पर्यावरण का संकट नहीं रहता, बल्कि सीधे देश की आर्थिक संप्रभुता, खाद्य सुरक्षा (Food Security) और करोड़ों नागरिकों के 'रोटी-रोजगार' पर संकट बन जाता है।

छत्तीसगढ़ की अनूठी स्थिति

मध्य भारत का यह राज्य अपनी समृद्ध जनजातीय संस्कृति और अद्वितीय कृषि विरासत के लिए जाना जाता है। इसे पूरे देश में 'धान का कटोरा' (Bowl of Rice) की गौरवशाली उपाधि प्राप्त है। छत्तीसगढ़ की लगभग 80 प्रतिशत ग्रामीण आबादी पूरी तरह से पारंपरिक कृषि और लघु वनोपज (जैसे महुआ, इमली, चारौटा, तेंदूपत्ता) के संग्रहण पर आश्रित है। यहाँ की कृषि में विविधता और मानसून की निर्भरता इतनी गहरी है कि यदि मानसून में 10 दिन की भी देरी हो जाए, तो पूरे राज्य की आर्थिक धड़कनें तेज हो जाती हैं।

भारत के स्तर पर बड़े बदलाव (Key Pan-India Impacts)

मानसून का अनिश्चित व्यवहार (Erratic Monsoon Pattern)

भारतीय कृषि का मूल आधार 'दक्षिण-पश्चिम मानसून' (South-West Monsoon) है। जलवायु परिवर्तन ने इसके पूरे चक्र को अस्त-व्यस्त कर दिया है। अब मानसून अपने सामान्य समय (1 जून) से या तो बहुत पहले आ जाता है या हफ्तों की देरी से आता है। सबसे चिंताजनक बात यह है कि अब 'रेनफॉल डिस्ट्रीब्यूशन' (Rainfall Distribution) पूरी तरह बिगड़ चुका है। जो बारिश पहले 3-4 महीनों में धीरे-धीरे होती थी, वह अब महज 48 से 72 घंटों में अत्यधिक भारी बारिश (Extreme Rainfall Events) के रूप में बरस जाती है। इसके परिणामस्वरूप एक ही समय में देश के कुछ हिस्सों में भीषण बाढ़ (Flash Floods) आ जाती है, जबकि अन्य हिस्से सूखे की चपेट में रहते हैं।

फसल चक्र (Crop Cycle) और थर्मल स्ट्रेस (Thermal Stress)

तापमान में हो रही अचानक वृद्धि रबी की सबसे महत्वपूर्ण फसल 'गेहूं' के लिए काल बन रही है। फरवरी और मार्च के महीनों में, जब गेहूं के दानों में दूध भर रहा होता है, अचानक तापमान 35°C से ऊपर चला जाता है। इसे वैज्ञानिक भाषा में 'थर्मल स्ट्रेस' कहते हैं। इस अत्यधिक गर्मी के कारण गेहूं की फसल समय से पहले पक जाती है (Early Maturation)। दानों को पूरा पोषण नहीं मिल पाता, जिससे वे छोटे, पतले और सिकुड़े रह जाते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (IARI) के अनुसार, तापमान में हर 1°C की वृद्धि से गेहूं के उत्पादन में 4-5 मिलियन टन की कमी आ सकती है।

खाद्य मुद्रास्फीति और बाजार अस्थिरता (Food Inflation)

बेमौसम बारिश, ओलावृष्टि (Hailstorms) और शीत लहर के चक्र में बदलाव का सीधा असर बागवानी फसलों (जैसे टमाटर, प्याज, आलू, हरी सब्जियां) पर पड़ता है। जब खेतों में तैयार खड़ी फसलें अचानक आई बेमौसम बारिश से सड़ जाती हैं, तो मंडियों में आपूर्ति (Supply chain) पूरी तरह ठप हो जाती है। इसके कारण बाजार में सब्जियों और खाद्यान्नों के दाम अचानक 200% से 300% तक बढ़ जाते हैं। यह स्थिति न केवल गरीब उपभोक्ताओं की थाली से पोषण छीनती है, बल्कि रिजर्व बैंक (RBI) की मौद्रिक नीतियों को भी प्रभावित करती है।

छत्तीसगढ़ की खेती में आए बदलाव (Chhattisgarh Specific Focus)

एक-फसली व्यवस्था (Mono-cropping) पर गंभीर चोट

छत्तीसगढ़ के मैदानी इलाकों (जैसे रायपुर, दुर्ग, धमतरी, महासमुंद और बिलासपुर संभाग) में पारंपरिक रूप से केवल 'धान' की खेती की जाती है। धान एक अत्यधिक पानी चाहने वाली (Water-intensive) फसल है। मानसून की अनिश्चितता के कारण अब पारंपरिक रोपाई (Ropa) और बियासी (Biyasi) की प्रक्रियाएं जो जून-जुलाई में पूरी हो जानी चाहिए थीं, वे अब अगस्त के मध्य तक खिंच जाती हैं। फसल देर से लगने के कारण ठंड के मौसम में धान की कटाई होती है, जिससे किसानों को रबी फसल (जैसे चना, अलसी) की बुआई के लिए पर्याप्त समय नहीं मिल पाता और उनकी दूसरी फसल पूरी तरह चौपट हो जाती है।

पारंपरिक बीजों का विलोपन और आनुवंशिक क्षति

छत्तीसगढ़ को धान की आनुवंशिक विविधता (Genetic Diversity) का गढ़ माना जाता था। प्रख्यात कृषि वैज्ञानिक डॉ. आर.एच. रिचहारिया के शोध के अनुसार, यहाँ धान की 20,000 से अधिक स्थानीय किस्में मौजूद थीं। इनमें 'दुबराज', 'विष्णुभोग', 'जवांफूल' जैसी सुगंधित किस्में थीं, तो वहीं 'नारीयल छड़ी' और 'सठिया' जैसी सूखा-रोधी (Drought-resistant) किस्में भी थीं जो कम पानी में पक जाती थीं। लेकिन हरित क्रांति के बाद हाइब्रिड बीजों (High-Yielding Varieties) की होड़ और तेजी से बदलते तापमान के कारण किसानों ने पारंपरिक बीजों को बोना बंद कर दिया। नतीजा यह हुआ कि आज मौसम की मार झेलने वाले हमारे स्वदेशी बीज लगभग विलुप्त होने की कगार पर हैं।

महानदी बेसिन में जल स्तर का गिरना (Groundwater Depletion)

छत्तीसगढ़ की जीवनदायिनी 'महानदी' और उसकी सहायक नदियां (जैसे शिवनाथ, अरपा, हसदेव) गर्मियों में सूखी जलधाराओं में बदल रही हैं। नहरों में पानी न होने के कारण किसानों ने ग्रीष्मकालीन धान (Summer Paddy) उगाने के लिए धरती का सीना चीरकर लाखों ट्यूबवेल और बोरवेल खोद दिए हैं। जलस्रोतों के अत्यधिक दोहन और वर्षा जल के सही संचयन न होने के कारण छत्तीसगढ़ के कई ब्लॉक अब 'डार्क ज़ोन' (Dark Zones) में तब्दील हो चुके हैं, जहाँ 400-500 फीट नीचे भी पानी मिलना मुश्किल हो गया है।

माइक्रो-क्लाइमेट में बदलाव और कीटों का प्रकोप

जंगलों की कटाई और बढ़ते शहरीकरण के कारण छत्तीसगढ़ का 'माइक्रो-क्लाइमेट' (स्थानीय जलवायु) बदल गया है। उमस और हवा में नमी का बढ़ा हुआ स्तर हानिकारक कीटों के प्रजनन के लिए सबसे अनुकूल होता है। पिछले कुछ वर्षों

में धान की फसलों में 'तना छेदक' (Stem Borer), 'गंधी बग' (Gandhi Bug) और 'ब्लास्ट' (झुलसा रोग) का प्रकोप कई गुना बढ़ गया है। इन कीटों से फसल बचाने के लिए किसान भारी मात्रा में जहरीले कीटनाशकों (Chemical Pesticides) का छिड़काव कर रहे हैं, जिससे खेती की लागत बढ़ रही है और मिट्टी के मित्र कीट (जैसे केंचुए, मकड़ियां) मर रहे हैं।

सामाजिक और आर्थिक प्रभाव (Socio-Economic Triggers)

ऋण का दुष्चक्र (The Debt Trap)

जब मौसम की बेरुखी के कारण लगातार 2 या 3 साल फसलें बर्बाद होती हैं, तो किसान गहरे कर्ज में डूब जाता है। महंगे बीज, रासायनिक खाद और ट्रैक्टर के किराए के लिए छोटे और सीमांत किसान (Small & Marginal Farmers) स्थानीय साहूकारों से 24% से 36% तक के ऊंचे ब्याज दर पर कर्ज लेते हैं। जब फसल बेचने का समय आता है, तो या तो पैदावार कम होती है या बाजार में सही मूल्य नहीं मिलता। यह स्थिति किसानों को मानसिक तनाव, जमीन बेचने और अत्यंत दुखद परिस्थितियों में आत्महत्या जैसे आत्मघाती कदम उठाने पर मजबूर कर देती है।

ग्रामीण पलायन की कड़वी सच्चाई (Distress Migration)

छत्तीसगढ़ के कुछ विशेष जिले जैसे महासमुंद, बलौदाबाजार, बेमेतरा, कवर्धा और जांजगीर-चांपा पलायन के बड़े केंद्र बन चुके हैं। दीपावली का त्योहार खत्म होते ही गांवों में सन्नाटा पसर जाता है। सिंचाई के साधनों की कमी और खेती में लगातार घाटे के कारण लाखों खेतिहर मजदूर और छोटे किसान अपने परिवारों के साथ उत्तर प्रदेश के ईंट-भट्टों, जम्मू-कश्मीर के निर्माण कार्यों या नागपुर, मुंबई, हैदराबाद जैसे महानगरों की ओर पलायन (Distress Migration) कर जाते हैं। इस पलायन की सबसे बड़ी कीमत उनके बच्चों को चुकानी पड़ती है, जिनकी पढ़ाई बीच में ही छूट जाती है।

कृषि का महिलाकरण और स्वास्थ्य संकट (Feminization of Agriculture)

पुरुषों के पलायन के बाद गांवों की सामाजिक व्यवस्था में एक बड़ा बदलाव आया है, जिसे समाजशास्त्री 'कृषि का महिलाकरण' कहते हैं। अब खेतों की जुताई (ट्रैक्टर प्रबंधन), बुआई, कटाई, मवेशियों की देखभाल और साथ ही बच्चों व बुजुर्गों को संभालने की पूरी तिहरी जिम्मेदारी अकेले ग्रामीण महिलाओं पर आ जाती है। बिना किसी तकनीकी प्रशिक्षण और भूमि पर मालिकाना हक (Land Rights) न होने के बावजूद वे दिन-रात खेतों में हाड़-तोड़ मेहनत करती हैं। अत्यधिक शारीरिक श्रम और कुपोषण के कारण ग्रामीण महिलाओं में एनीमिया (खून की कमी) और रीढ़ की हड्डियों से जुड़ी बीमारियां तेजी से बढ़ रही हैं।

अनुकूलन और समाधान: बदलती तस्वीर (Adaptation & Positive Changes)

छत्तीसगढ़ मिलेट मिशन (Millet Mission) - एक वैश्विक मॉडल

इस संकट के बीच छत्तीसगढ़ ने एक बेहद क्रांतिकारी कदम उठाया है। राज्य ने रागी (Finger Millet), कोदो (Kodo Millet) और कुटकी (Little Millet) जैसे पोषक अनाजों को बढ़ावा देने के लिए 'मिलेट मिशन' शुरू किया। ये सुपरफूड 'क्लाइमेट-रेशीलियंट' (Climate-Resilient) होते हैं, जिन्हें धान की तुलना में केवल 30% पानी की आवश्यकता होती है और ये 40°C से अधिक तापमान में भी बिना किसी नुकसान के उग सकते हैं। सरकार द्वारा इन मोटे अनाजों को न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) पर खरीदने और मिड-डे मील में शामिल करने से बस्तर और सरगुजा के जनजातीय किसानों की आय में भारी उछाल आया है।

फसल विविधीकरण (Crop Diversification Policy)

राज्य सरकार किसानों को 'धान के बदले' कम पानी वाली और अधिक मुनाफा देने वाली फसलों को उगाने के लिए प्रोत्साहित कर रही है। किसान अब धान के खेतों को बदलकर दलहन (अरहर, मूंग, चना), तिलहन (सूरजमुखी, सरसों), औषधीय पौधों (अश्वगंधा, लेमनग्रास) और फल-फूलों (जैसे गेंदा, गुलाब, पपीता) की खेती कर रहे हैं। इससे न केवल पानी की बचत हो रही है, बल्कि मिट्टी में नाइट्रोजन फिक्सेशन (Nitrogen Fixation) के जरिए भूमि की प्राकृतिक शक्ति भी लौट रही है।

सौर सुजला योजना और ग्रीन एनर्जी (Solar Sujala Yojana)

छत्तीसगढ़ का कृषि विभाग उन दूरदराज के क्षेत्रों में, जहां बिजली के खंभे नहीं पहुंच पाए थे, किसानों को अत्यधिक रियायती दरों पर 3HP और 5HP के सौर सिंचाई पंप (Solar Water Pumps) उपलब्ध करा रहा है। इस योजना से राज्य के 1.5 लाख से अधिक किसान लाभान्वित हो चुके हैं। इसका दोहरा फायदा हुआ है: पहला, किसानों को रात में सिंचाई करने के डर से मुक्ति मिली है और दूसरा, कृषि क्षेत्र में डीजल इंजनों के बंद होने से कार्बन फुटप्रिंट (Carbon Footprint) में भारी कमी आई है।

प्राकृतिक खेती और गोधन न्याय की जुगलबंदी (Natural & Organic Farming)

मिट्टी की सेहत सुधारने के लिए रासायनिक उर्वरकों (यूरिया, डीएपी) के अंधाधुंध प्रयोग को रोका जा रहा है। छत्तीसगढ़ की 'गोधन न्याय योजना' के तहत गांवों में बने 'गौठानों' (Cattle Sheds) में ग्रामीणों से गोबर और गोमूत्र खरीदकर बड़े पैमाने पर वर्मिकॉम्पोस्ट (Vermicompost) और 'ब्रह्मास्त्र' (प्राकृतिक कीटनाशक) तैयार किया जा रहा है। इस जैविक खाद

के उपयोग से मिट्टी की जल-धारण क्षमता (Water Holding Capacity) बढ़ी है, जिससे सूखे के दिनों में भी फसलें लंबे समय तक हरी-भरी रहती हैं।

निष्कर्ष और आगे की राह (Conclusion & Way Forward)

क्लाइमेट-स्मार्ट एग्रीकल्चर (Climate-Smart Agriculture) समय की मांग

21वीं सदी की कृषि को जिंदा रखने के लिए हमें पारंपरिक तरीकों को आधुनिक विज्ञान के साथ जोड़ना होगा। हमें 'क्लाइमेट-स्मार्ट एग्रीकल्चर' को ब्लॉक स्तर पर लागू करना होगा। इसके तहत:

- **माइक्रो-इरिगेशन:** ड्रिप (टपक सिंचाई) और स्प्रिंकलर (फव्वारा सिंचाई) पद्धतियों को 100% सब्सिडी के साथ अनिवार्य बनाना होगा ताकि 'पर ड्रॉप, मोर क्रॉप' (Per Drop, More Crop) का लक्ष्य हासिल हो सके।
- **शॉर्ट-ड्यूरेशन क्रॉप्स:** कृषि विश्वविद्यालयों (जैसे इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर) को ऐसी नई किस्में विकसित करनी होंगी जो 90 से 100 दिनों के भीतर पककर तैयार हो जाएं, ताकि वे मौसम के अचानक बदलाव से बच सकें।
- **एग्रो-मेट एडवाइजरी:** उपग्रह (Satellite) और मोबाइल ऐप्स के माध्यम से ब्लॉक और गांव के स्तर पर किसानों को 7 दिन पहले ही मौसम का सटीक पूर्वानुमान और कीटों के हमले की चेतावनी (Early Warning System) देनी होगी।

अंतिम संदेश

बदलते मौसम के इन थपेड़ों के बीच 'धान के कटोरे' की हरियाली को बचाए रखना और भारत के अन्न भंडार को सुरक्षित रखना केवल सरकार या वैज्ञानिकों की जिम्मेदारी नहीं है। यह हमारे अस्तित्व का प्रश्न है। यदि हमने आज अपनी जीवनशैली, जल संचयन की आदतों और कृषि पद्धतियों में सुधार नहीं किया, तो आने वाले समय में जलवायु परिवर्तन हमारी समृद्ध सांस्कृतिक और कृषि विरासत को पूरी तरह लील जाएगा। वक्त आ गया है कि हम प्रकृति से लड़ने के बजाय प्रकृति के साथ मिलकर चलना सीखें।